①

भारतीय दण्ड संहिता - II

एल एल.बी. (3 year) IInd sem.

यूनिट - I

1. आपराधिक मानववध -(धारा 299)
2. हत्या (धारा 300)
3. आपराधिक मानववध और हत्या में अंतर
4. उपेक्षा द्वारा मृत्यु कारित करना (धारा 304-क)
5. दहेज मृत्यु (धारा 304-ख)
6. सदोष अवरोध और सदोष परिरोध (धारा 339-340)
7. उपहति और घोर उपहति (धारा 319 - 320)
8. व्यपहरण और अपहरण (धारा 359 - 362)

Scanned with CamScanner

भारतीय दण्ड संहिता - II

(I - यूनिट के संभावित प्रश्न)

1. आपराधिक मानव वध को परिभाषित करे और आपराधिक मानव वध एंव हत्या में अंतर बताइये।

आपराधिक मानव वध -

धारा - 299 के अनुसार - " जो कोई मृत्यु कारित करने के आशय से, या ऐसी शारीरिक क्षति कारित करने के आशय से जिससे मृत्यु कारित हो जाना सम्भाव्य हो, या यह ज्ञान रखते हुए कि यह सम्भाव्य है कि वह उस कार्य से मृत्यु कारित कर दे, कोई कार्य करके मृत्यु कारित कर देता है, वह आपराधिक मानव वध का अपराध करता है।"

दृष्टान्त - क एक गड्ढे पर लकडियाँ और घास इस आशय से बिछाता है कि तद्द्वारा मृत्यु कारित करे या वह ज्ञान रखते हुये बिछाता है कि तद्द्वारा मृत्यु कारित हो 'य' यह विश्वास करते हुये कि यह सुदृढ़ है, उस पर चलता है, उसमें गिर पडता है और मर जाता है। क ने आपराधिक मानव वध का अपराध किया है।

आवश्यक तत्व

आपराधिक मानव वध के निम्नलिखित आवश्यक तत्व हैं -

(i) किसी मानव की मृत्यु कारित करना
(ii) ऐसी मृत्यु का ऐसे किसी कार्य के द्वारा कारित होना -

Scanned with CamScanner

(क) जो मृत्यु कारित करने के आशय से किया गया हो, या

(ख) जो ऐसी शरीरिक क्षति कारित करने के आशय से किया गया हो, जिससे मृत्यु कारित किया जाना सम्भाव्य हो, या

(ग) जो इस ज्ञान से किया गया हो कि उससे मृत्यु कारित होना सम्भाव्य है।

'मृत्यु' से अभिप्राय यहाँ मानव प्राणी की मृत्यु से है (धारा - 46)। किसी अजन्मे शिशु की मृत्यु इसमें सम्मिलित नहीं है (स्पष्टीकरण 3)। यहाँ यह आवश्यक नहीं है कि मृत्यु उसी व्यक्ति को कारित हुई हो जिसकी मृत्यु कारित करने का आशय था। ज्यों ही किसी भी व्यक्ति की मृत्यु कारित होती है, यह अपराध पूर्ण हो जाता है (स्पष्टीकरण - 1 एवं धारा 301)।

<u>महत्वपूर्ण वाद</u>

(1) अब्राहिम शेख का मामला (AIR 1964 SC) -
इसमें यह धारणा किया गया कि जहाँ कोई कार्य विचार पूर्वक किया गया हो, वह दुर्घटना या लापरवाही का परिणाम न हो, तो यह स्पष्ट है कि अपराध आपराधिक मानव वध का होगा।

(2) पलानी का मामला (1919, मद्रास) - इसमें अभियुक्त ने अपनी पत्नी पर एक फाल से वार किया। यद्यपि यह ज्ञात नहीं था कि ऐसे वार से मृत्यु कारित हो जाना सम्भव है, परन्तु वह बेहोश हो गई। अभियुक्त ने उसे मृत समझ कर आत्महत्या सिद्ध करने की दृष्टि से उसे रस्सी से बांधकर लटका दिया और इसके परिणाम स्वरूप दम घुटने से उसकी मृत्यु हो गई। यह धारणा किया गया कि अभियुक्त आपराधिक मानव वध का दोषी है।

Scanned with CamScanner

(5) जलालुद्दीन का मामला (1892) — इस वाद में एक लड़की में से प्रेतात्मा को निकालने के लिये झाड़फूंक करने के दौरान उसे पीटा गया, जिससे उसकी मृत्यु हो गई। पाया गया कि अभियुक्त आपराधिक मानव वध का दोषी था।

आपराधिक मानव वध और हत्या में अंतर

आपराधिक मानव वध और हत्या में अंतर मात्रा या परिमाण का है न कि रूप का। आशय या ज्ञान की मात्रा अपराध की प्रकृति निश्चित करती है। रेक्स Vs गोविन्दा (1876), बाम्बे, के महत्वपूर्ण मामले में मेलविल जज ने आपराधिक मानव वध और हत्या में अंतर स्पष्ट किया।

इस मामले में अभियुक्त ने अपनी पत्नी को नीचे गिराकर उसकी छाती पर अपना घुटना रखकर उसको जोर से दो-तीन घूंसे मारे, जिससे खून बहने लगा एवं परिणाम स्वरूप उसकी मृत्यु हो गई। यहाँ न्यायालय के समक्ष यह प्रश्न उठा कि यह मामला आपराधिक मानव वध का है या हत्या का ?

मेलविल जज ने निर्णय देते हुये इसे आपराधिक मानव वध बताया, हत्या नहीं। उनका मत था कि अभियुक्त का उसकी पत्नी को मार देने का कोई आशय नहीं था, और न ही उसके द्वारा पहुंचाई गई चोटें प्रकृति के सामान्य अनुक्रम में ऐसी थीं कि उनसे मृत्यु कारित हो जाना सम्भव हो।

मेलविल जज ने आपराधिक मानव वध और हत्या में निम्नलिखित अंतर स्पष्ट किये :—

आपराधिक मानव वध (धारा 299)	हत्या (धारा - 300)
कोई व्यक्ति यदि ऐसा कोई कार्य करता है जिससे मृत्यु कारित होती है, तो वह आपराधिक मानव वध होगा —	कुछ मामलों में आपराधिक मानव वध हत्या होती है यदि किये गये कार्य से मृत्यु कारित होती है —

Scanned with CamScanner

आशय

(1) मृत्यु कारित करने के आशय से,	(1) मृत्यु कारित करने के आशय से,
(2) ऐसी शरीरिक क्षति कारित करने के आशय से जिससे मृत्यु कारित होना सम्भाव्य हो।	(2) ऐसी शारीरिक क्षति कारित करने के आशय से जिसके बारे में अपराधी जानता हो कि उस व्यक्ति की मृत्यु कारित करना सम्भाव्य है, जिसको वह अपहानि की गयी है।
	(3) किसी व्यक्ति को शरीरिक क्षति कारित करने के आशय से किया गया हो और वह शरीरिक क्षति जिसको कारित करने का आशय हो प्रकृति के मामूली अनुक्रम में मृत्यु के लिये पर्याप्त हो।

ज्ञान

(3) इस ज्ञान से किया गया हो कि उस कार्य से मृत्यु कारित होना सम्भाव्य है।	(4) इस ज्ञान के साथ किया गया हो कि वह कार्य इतना आसन्न संकटकारी है कि पूरी अधि संभाव्यता है कि वह मृत्यु कारित कर ही देगा या ऐसी शरीरिक क्षति कारित करेगा जिससे मृत्यु कारित होना सम्भाव्य है और ऐसा बिना प्रतिहेतु के किया गया हो।

1. जब भी मृत्यु कारित करने का आशय हो, धारा 300 के अपवादों को छोड़कर मामला हत्या का ही होता है। (धारा 299 (i) और धारा 300 (1) की दशा में)

(2) धारा 299 (2) के दो तत्व है –

आशय – शरीरिक क्षति कारित करने का,

सम्भावना – मृत्यु की
यह मृत्यु हो सकती है;

जबकि धारा 300 (2) में –

आशय - शरीरिक क्षति का

ज्ञान - मृत्यु का

अत: धारा 300(2) के जो तत्व धारा 299(2) से अलग करता है वह है ज्ञान, जो कि मृत्यु का होता है, जबकि धारा 299 (2) में मृत्यु का ज्ञान नहीं होता है।

जैसे - यदि 'क' यह जानता है कि किसी व्यक्ति को प्लीहा बढ़ा हुआ है और वह उसे उस स्थान पर एक घूंसा मारता है। यहाँ उसका आशय शरीरिक क्षति कारित करने का है, किन्तु वह जानता है कि ऐसे प्रहार से वह व्यक्ति मर जायेगा। अत: यह मामला धारा 300(2) में हत्या का होगा।

(3) धारा 299 (2) में शरीरिक क्षति जिससे मृत्यु सम्भाव्य है) जबकि धारा 300 (3) में जो तत्व धारा 299(2) से अलग करता है वह 'प्रकृति के मामूली अनुक्रम में' मृत्यु की पर्याप्तता।

जब हम मृत्यु की सम्भावना जैसा कि धारा 299 (2) में दिया है और धारा 300(3) में दिया गया प्रकृति के मामूली अनुक्रम में मृत्यु की पर्याप्तता में अन्तर करते है तो हमें निम्न तत्वों को ध्यान में रखना होता है –

(i) हथियार
(ii) वार की तीव्रता
(iii) वार किस स्थान पर किया गया

इस सम्बन्ध में हम शरीर को दो भागों में बांटते है, मर्म स्थान - जैसे - पेट, सर आदि और अमर्म स्थान जैसे - पैर, हाथ, जंघा आदि।

Scanned with CamScanner

(6)

अतः जब भी हम धारा 299(2) एवं धारा 300(3) में अंतर करेंगे तो हमेशा इस बात को ध्यान में रखेंगे कि किस हथियार से और किस तीव्रता एवं शरीर के किस स्थान पर वार किया गया है। यदि हम पाते हैं वार तीव्रता में मर्म स्थानों पर किया गया है तो हम निश्चित ही कहेंगे की मामला हत्या का ही है!

(4) धारा 299(3) और धारा 300(4) में जो महत्वपूर्ण अन्तर है वह कार्य की प्रकृति पर है, यदि कार्य इतना आसन्न संकट से पूर्ण है कि हर अधिसम्भाव्यता में मृत्यु होगी तो मामला हत्या का होगा, अन्यथा मानव वध का! जैसे - यदि 'अ' बिना किसी प्रतिहेतु के व्यक्तियों के समूह पर भरी हुई पिस्तौल चलाता है और उसमें से एक का वध कर देता है, यह मामला धारा 300(4) में आयेगा!

Scanned with CamScanner

(7)

दहेज मृत्यु (धारा - 304 - ख)

(1) जहां किसी स्त्री की मृत्यु किसी दाह या शारीरिक क्षति द्वारा कारित की जाती है या उसके विवाह के सात वर्ष के भीतर सामान्य परिस्थितियों से अन्यथा हो जाती है और यह दर्शित किया जाता है कि उसकी मृत्यु के पूर्व उसके पति ने या उसके पति के किसी नातेदार ने, दहेज की किसी मांग के लिये, या उसके सम्बन्ध में, उसके साथ क्रूरता की थी या उसे तंग किया था, वहां ऐसी मृत्यु को "दहेज मृत्यु" कहा जायेगा, और ऐसा पति या नातेदार उसकी मृत्यु कारित करने वाला समझा जाएगा।

स्पष्टीकरण - इस उपधारा के प्रयोजन के लिये "दहेज" का वही अर्थ है जो दहेज प्रतिषेध अधि०, 1961 की धारा 2 में है।

(2) जो कोई दहेज मृत्यु कारित करेगा वह कारावास से, जिसकी अवधि सात वर्ष से कम नहीं होगी किन्तु जो आजीवन कारावास तक की हो सकेगी, दण्डित किया जाएगा।

यह धारा दाण्डिक विधि संशोधन अधि०, 1986 द्वारा जोड़ी गयी है। यह धारा किसी स्त्री के पति अथवा पति के सम्बन्धियों द्वारा उस स्त्री की दहेज सम्बन्धी मृत्यु कारित करने को अपराध रूप में दण्डित करती है।

आवश्यक तत्व - इसके तीन आवश्यक तत्व हैं -

(1) मृत्यु दाह द्वारा अथवा शारीरिक क्षति द्वारा कारित की गई हो अथवा सामान्य परिस्थितियों से अन्यथा घटित हुई हो।

(2) मृत्यु विवाह से सात वर्ष के अन्दर की अवधि में घटित हुई हो।

Scanned with CamScanner

(3) यह दर्शाया जाना आवश्यक है कि मृत्यु के ठीक पहले उसके पति अथवा पति के किसी सम्बन्धी द्वारा उस महिला के साथ क्रूरता की गई हो।

(4) ऐसी क्रूरता या तंग किया जाना दहेज के लिये अथवा दहेज की किसी मांग के सम्बन्ध में की गई हो।

(5) इस धारा के प्रयोजनों हेतु दहेज का वही अर्थ होगा जो दहेज प्रतिषेध अधि०, 1961 की धारा 2 में अभिप्रेत है।

'ठीक पूर्व' से अभिप्राय –

धारा 304-ख में प्रयुक्त शब्द "ठीक पूर्व" से अभिप्राय निर्दयता या तंग एवं मृत्यु के बीच सम्भावित तारतम्य का होना है। (कुन्हैयाब्दुल्ला Vs केरल राज्य, 2004)

<u>सम्बंधित वाद</u>

1. श्रीमति शान्ति और अन्य Vs हरियाणा राज्य, 1991, एस०सी० के वाद में धारण किया गया कि अभियुक्त गण का मृतका के पिता तथा भाई से दहेज की शिकायत एवं मांग करना, मृतक पत्नी के साथ निर्दयतापूर्वक व्यवहार करना, मृतक का विवाह के सात साल के भीतर मर जाना तथा मृतक के माता-पिता को सूचना दिये बिना जल्दबाजी में मृतक का दाह-संस्कार कर देना, यह सब अप्राकृतिक मृत्यु के संकेत है तथा धारा 304-ख के अन्तर्गत अपराध का गठन करते हैं।

2- कर्नाटक राज्य Vs एम.वी. मंजूनाथ, 2003 एस.सी. का मामला - इसमें पत्नी की विवाह के छः माह के भीतर मृत्यु हो गई थी। मृत्यु से पूर्व उसे दहेज के लिये तंग किया गया था। मृतका के पिता एवं भाई की साक्ष्य से उक्त बात की पुष्टि होती थी। इसे दहेज हत्या माना गया।

Scanned with CamScanner

(3) पवन कुमार Vs हरियाणा राज्य, 1999 एस.सी. का मामला –

इस मामले में उच्चतम न्यायालय द्वारा यह अभिनिर्धारित किया गया है कि "दहेज मृत्यु" के मामलों में 'दहेज' के लिये करार का होना आवश्यक नहीं है। वधू और उसके पिता से निरन्तर टी.वी. और स्कूटर की मांग करते रहना दहेज की परिधि में आता है।

(4) तीरथ कुमारी Vs हरियाणा राज्य, 2005 एस.सी. का मामला

इस वाद में धारा 304-ख के अन्तर्गत की गई दोषसिद्धि को इसलिये अपास्त किया गया, क्योंकि मृत्यु से ठीक पूर्व दहेज की मांग को लेकर मृतका को यातना देने अथवा परेशान करने वाले साक्ष्य का अभाव था।

Scanned with CamScanner

(3) ~~अपहरण~~ व्यपहरण

धारा 359 के अनुसार - व्यपहरण दो किस्म का होता है - भारत में से व्यपहरण और विधिपूर्ण संरक्षकता में से व्यपहरण

भारत में से व्यपहरण -

धारा 360 के अनुसार - जो कोई किसी व्यक्ति का, उस व्यक्ति की, या उस व्यक्ति की ओर से सम्मति देने के लिए वैधरूप से प्राधिकृत किसी व्यक्ति की सम्मति के बिना, भारत की सीमाओं से परे प्रवहण कर देता है, वह भारत में से उस व्यक्ति का व्यपहरण करता है, यह कहा जाता है।

विधिपूर्ण संरक्षकता में से व्यपहरण -

धारा 361 के अनुसार - जो कोई किसी अप्राप्तवय को, यदि वह नर हो, तो सोलह वर्ष से कम आयु वाले को या यदि वह नारी हो तो अट्ठारह वर्ष से कम आयु वाली को या किसी विकृतचित्त व्यक्ति को, ऐसे अप्राप्तवय या विकृतचित्त व्यक्ति के विधिपूर्ण संरक्षक की संरक्षकता में से ऐसे संरक्षक की सम्मति के बिना ले जाता है या बहका ले जाता है, वह ऐसे अप्राप्तवय या ऐसे व्यक्ति का विधिपूर्ण संरक्षकता में से व्यपहरण करता है, यह कहा जाता है।

स्पष्टीकरण - इस धारा में 'विधिपूर्ण संरक्षक' शब्दों के अन्तर्गत ऐसा व्यक्ति आता है जिस पर ऐसे अप्राप्तवय या अन्य व्यक्ति की देख-रेख या अभिरक्षा का भार विधिपूर्वक न्यस्त किया गया है।

अपवाद - इस धारा का विस्तार किसी ऐसे व्यक्ति के कार्य पर नहीं है, जिसे सद्भावपूर्वक यह विश्वास है कि वह किसी अधर्मज शिशु का पिता है, या जिसे सद्भावपूर्वक यह विश्वास है कि वह ऐसे शिशु की विधिपूर्ण अभिरक्षा का हकदार है, जबतक कि ऐसा कार्य दुराचारिक या विधिविरुद्ध प्रयोजन के लिये न किया जाए।

Scanned with CamScanner

उद्देश्य - इस धारा का निम्नलिखित है -

(i) कम आयु के बच्चों को, उनके विधिपूर्ण संरक्षक की अभिरक्षा से, अनुचित प्रयोजनों के लिये व्यपहरण करने या फुसलाये जाने से रक्षा करना एवं

(ii) स्वयं संरक्षक को संरक्षण एवं सुरक्षा प्रदान करना

आवश्यक तत्त्व - विधिपूर्ण संरक्षकता से व्यपहरण का अपराध गठित किये जाने के लिये निम्नलिखित चार शर्तों का पूरा किया जाना आवश्यक है -

(1) किसी अवयस्क या विकृतचित्त वाले व्यक्ति को ले जाना या फुसलाना,

(2) ऐसे अवयस्क की आयु, यदि वह नर हो तो सोलह वर्ष या यदि वह नारी हो तो अठारह वर्ष से कम होना,

(3) ऐसे किसी अवयस्क या विकृतचित्त वाले व्यक्ति को उसके विधिपूर्ण संरक्षक की संरक्षकता से ले जाया जाना या फुसलाना,

(4) ऐसे किसी व्यक्ति को उसके विधिपूर्ण संरक्षक की सम्मति के बिना ले जाया जाना।

(1) किसी अवयस्क या विकृतचित्त वाले व्यक्ति को ले जाना या फुसलाना —

ज्यों हि विधिपूर्ण संरक्षक की अभिरक्षा में से ऐसे किसी अवयस्क या विकृतचित्त को हटाया जाता है, त्यों ही व्यपहरण का अपराध पूर्ण हो जाता है। इस बात का कोई महत्व नहीं है कि उस अवयस्क या विकृतचित्त व्यक्ति को उसके संरक्षक से कितनी दूर तक ले जाया गया (ठग्गूराम का मामला 1968 पंजाब)।

Scanned with CamScanner

(12)

इस धारा में प्रयुक्त शब्द 'ले जाने' (Taking) से अभिप्राय शारीरिक रूप से हटाये जाने से है। जहां अभियुक्त किसी लड़की को उसके पिता की अभिरक्षा में से अपने साथ ले जाता है, वहां वह इस धारा के अन्तर्गत अपराध गठित करता है (इन रि खलन्दर साहिब, 1855)।

(2) ऐसे अवयस्क की आयु स्त्री एवं पुरुष की अवस्था में क्रमशः अठारह वर्ष एवं सोलह वर्ष की होना —

अभियोजन पक्ष को यह सिद्ध करना होता है कि व्यपहृत किये गये पुरुष की आयु 16 वर्ष से कम एवं स्त्री की की आयु 18 वर्ष से कम है। जहां लड़की धोखे से अपनी आयु अधिक बता देती है, वहां अभियुक्त के लिये यह बचाव नहीं माना जायेगा (अधीन V_s केरल राज्य, 1966)।

(3) विधिपूर्ण संरक्षक की अभिरक्षा में से ले जाया जाना —

कोई भी व्यक्ति जो कि विधिपूर्ण ढंग से किसी शिशु या अन्य व्यक्ति का शुभचिंतक या संरक्षक निर्धारित कर दिया गया हो, उसका विधिपूर्ण संरक्षक होता है (स्पष्टीकरण) विधिपूर्ण संरक्षक एवं वैध संरक्षक में अन्तर है। कोई संरक्षक वैध न होते हुए भी विधिपूर्ण संरक्षक हो सकता है (नाथू सिंह, A.I.R 1942)।

(4) ऐसे संरक्षक की सम्मति के बिना ले जाना —

अवयस्क की सम्मति का कोई महत्व नहीं है, अर्थात व्यपहरण किये जाने वाले व्यक्ति की सम्मति का कोई अर्थ नहीं होता। व्यपहरण का अपराध गठित होने के लिये जो कुछ आवश्यक है, वह है — संरक्षक की सम्मति का अभाव। जहां अभियुक्त संरक्षक के सामने मिथ्या व्यपदेशन कर उसकी पुत्री को फुसलाकर ले जाता है तो इसे व्यपहरण माना जायेगा।

Scanned with CamScanner

(13) सम्बंधित महत्वपूर्ण वाद

(1) निमाई-चट्टोराज का मामला (1900)

(2) टी. डी. वाडगम्मा Vs गुजरात राज्य, (AIR 1973 S.C.)

(3) वरदराजन Vs मद्रास राज्य (AIR, 1965 S.C.)

व्यपहरण और अपहरण में अन्तर

व्यपहरण (धारा 361)	अपहरण (धारा 362)
1. व्यपहरण का अपराध 16 वर्ष से कम आयु के बालक या 18 वर्ष से कम आयु की बालिका अथवा विकृतचित्त के साथ किया जाता है।	1. अपहरण का अपराध किसी भी आयु के व्यक्ति के साथ किया जाता है।
2. व्यपहरण का अपराध तब घटित होता है जब किसी व्यक्ति को उसके विधिपूर्ण संरक्षक की संरक्षकता से हटाया जाता है।	2. अपहरण में अपहृत व्यक्ति का किसी की संरक्षकता में होना आवश्यक नहीं है।
3. व्यपहरण में व्यक्ति को ले जाने या बहकाने मात्र से ही व्यपहरण गठित हो जाता है।	3. अपहरण में प्रयोग में लाये जाने वाले साधन महत्वपूर्ण होते हैं। वे साधन हैं बल या प्रवंचना पूर्ण उत्प्रेरणा।
4. व्यपहरण में बहकाये गये व्यक्ति की सम्मति का कोई महत्व नहीं है, क्योंकि ऐसे व्यक्ति सहमति देने में सक्षम नहीं माने जाते हैं।	4. अपहरण में यदि अपहृत व्यक्ति व्यक्ति अपनी स्वतन्त्र सहमति देता है तो अपहरण नहीं माना जाता है।

Scanned with CamScanner

(5) 'व्यपहरण' चालू रहने वाला अपराध नहीं है क्योंकि यह तब पूर्ण होता है जब व्यपहृत व्यक्ति को उसकी विधिपूर्ण सरक्षकता से हटाया जाता है।	(5) अपहरण का अपराध चालू रहने वाला अपराध है और यह तब तक चालू रहता है जब तक कि अपहृत व्यक्ति को एक स्थान से दूसरे स्थान में ले जाया जाता है।
(6) व्यपहरण का अपराध एक मूल अपराध है।	(6) अपहरण का अपराध मूल अपराध नहीं है। अतः यह स्वतः दंडनीय नहीं है जब तक कि इसे धारा 364 से आगे की धाराओं में उल्लिखित किसी एक आशय से किया जाए।

Scanned with CamScanner

(15)

(A) हत्या
(धारा - 300)

धारा 300 के अनुसार -
एतस्मैन पश्चात् अपवादिक दशाओं को छोड़कर आपराधिक मानव वध हत्या है, यदि वह कार्य, जिसके द्वारा मृत्यु कारित की गई हो, मृत्यु कारित करने के आशय से किया गया हो, अथवा

दूसरी - यदि वह ऐसी शारीरिक क्षति कारित करने के आशय से किया गया हो जिससे अपराधी जानता हो कि उस व्यक्ति को मृत्यु कारित करना सम्भाव्य है, जिसको यह अपहानि कारित की गई है, अथवा

~~दूसरे~~ तीसरी - यदि वह किसी व्यक्ति को शारीरिक क्षति कारित करने के आशय से किया गया हो ~~जिससे~~ और वह शारीरिक क्षति, जिसके कारित करने का आशय हो, प्रकृति के मामूली अनुक्रम में मृत्यु कारित करने के लिये पर्याप्त हो, अथवा

चौथी - यदि कार्य करने वाला व्यक्ति यह जानता हो कि वह कार्य इतना आसन्न संकट है कि पूरी अधिसम्भाव्यता है कि वह मृत्यु कारित कर ही देगा या ऐसी शारीरिक क्षति कारित कर ही देगा जिससे मृत्यु कारित होना सम्भाव्य है और वह मृत्यु कारित करने या पूर्वोक्त रूप की क्षति कारित करने की जोखिम उठाने के लिये किसी प्रतिहेतु के बिना ऐसा कार्य करे।

आवश्यक तत्व

हत्या, आपराधिक मानव वध का ही एक गम्भीर एवं विस्तृत रूप है। संहिता की धारा 300 में हत्या के बारे में उपबंधित किया गया है।

निम्न लिखित परिस्थितियों में कोई भी आपराधिक मानव वध हत्या का रूप धारण कर लेता है -

(i) ऐसा कोई कार्य जो मृत्यु कारित करने के आशय से किया जाता है, जिससे मृत्यु कारित हो जाती है -
उदाहरणार्थ - किसी व्यक्ति को विष देना, या ऐसे व्यक्ति को, जो झोपड़ी में है, उसमें आग लगाकर मृत्यु कारित कर देना

(ii) किसी व्यक्ति को इस आशय से कोई चोट पहुँचाई गई हो, जिसके लिये वह जानता है कि उससे उसकी मृत्यु हो जाना सम्भाविक है -

Scanned with CamScanner

उदाहरणार्थ- क द्वारा एक ऐसे दुर्बल एवं क्षीण व्यक्ति को चोट पहुँचाना, जो उसकी मृत्यु करने के लिये पर्याप्त हो, हत्या का अपराध माना जायेगा।

(iii) कोई ऐसी शारीरिक चोट पहुचाने के आशय से किया गया कार्य. जो प्रकृति के सामान्य अनुक्रम में मृत्यु हो -

उदाहरणार्थ- क, ख पर तलवार से घातक हमला करता है और परिणामस्वरूप ख की मृत्यु हो जाती है, क हत्या का दोषी माना जायेगा।

(iv) ऐसा कोई गंभीर कार्य या आसन्न संकटपूर्ण कार्य जो बिना किसी प्रतिहेतु या उचित कारण के किया जाता है, जिससे किसी की मृत्यु कारित हो जाना संभव हो तो वह हत्या माना जायेगा।

उदाहरणार्थ- क किसी भीड़ पर बिना किसी उचित कारण के गोली चलाता है, जिससे एक व्यक्ति ख की मृत्यु हो जाती है क हत्या का दोषी माना जायेगा। भले ही उसकी आशय ख की हत्या करने की नही थी।

सम्बंधित वाद

(1) आर. वेंकलू का मामला (AIR, 1956 S.C)

(2) कारु मारिक Vs बिहार राज्य (AIR 2001 S.C)

(3) उ० प्र० राज्य Vs वीरेन्द्र प्रसाद (AIR; 2004 S.C.)

(4) इन रि अरुमुघम का मामला (1990, MSIU)

(5) मध्य प्रदेश राज्य Vs राम प्रसाद (AIR, 1968 SC)

Scanned with CamScanner

(5) उपेक्षा द्वारा मृत्यु कारित करना

धारा – 304 – क

"जो कोई उतावलेपन से या उपेक्षापूर्ण किसी ऐसे कार्य से किसी व्यक्ति की मृत्यु कारित करेगा, जो आपराधिक मानव वध की कोटि में नहीं आता, वह दोनो में से किसी भांति के कारावास से, जिसकी अवधि दो वर्ष तक की हो सकेगी, या जुर्माने से, या दोनो से दण्डित किया जाएगा।"

धारा 304 – क के प्रावधान ऐसे मामलो में प्रयोज्य होते है, जहां मृत्यु न तो आशयपूर्वक कारित की जाती है और न ही ऐसा कोई कार्य किया जाता है जिसके बारे में यह ज्ञान रहता है कि उससे मृत्यु कारित होना सम्भाव्य है।

धारा 304 – क के अन्तर्गत किया जाने वाला कार्य आपराधिक प्रकृति का नही होता। यदि ऐसा कार्य आरम्भ से ही आपराधिक प्रकृति का हो तो यह धारा प्रयोज्य नही होती।

यह धारा सिर्फ ऐसे कार्यों पर लागू होती है, जो –

(i) उतावलेपन से किये गये हों, या
(ii) उपेक्षा से किये गये हों, या
(iii) आशयपूर्वक जानबूझ नहीं किये गये हो।

"उपेक्षा पूर्ण कार्य" से अभिप्राय ऐसे कार्य या लोप से है, जिसको एक विचारशील एवं युक्तियुक्त व्यक्ति तत्कालीन परिस्थितिओं में अवश्य करेगा। कोई खतरनाक या भयानक कार्य, यह जानते हुए कि वह ऐसा है और उससे चोट लग सकती है या लगने की सम्भावना है, करना 'आपराधिक उतावलापन' है।

सम्बन्धित वाद –

1. मो० आमूनद्दीन उर्फ मियाम Vs आन्ध्रप्रदेश राज्य (AIR 2000 SC)
2. बलदेवजी भाईजी ठाकुर Vs गुजरात राज्य (1979)

Scanned with CamScanner

(6) सदोष अवरोध और सदोष परिरोध
(धारा 339 – 348)

सदोष अवरोध – (धारा – 339)

"जो कोई किसी व्यक्ति को स्वेच्छया ऐसी बाधा डालता है कि उस व्यक्ति को उस दिशा में, जिनमें उस व्यक्ति को जाने का अधिकार है, जाने से निवारित कर दे, वह उस व्यक्ति का सदोष अवरोध करता है, यह कहा जाता है।"

अपवाद – भूमि के या जल के ऐसे प्राइवेट मार्ग में बाधा डालना जिसके सम्बंध में किसी व्यक्ति को सद्भावपूर्वक विश्वास है कि वहाँ बाधा डालने का उसे विधिपूर्ण अधिकार है, इस धारा के अर्थ के अन्तर्गत अपराध नहीं है।

सदोष अवरोध किसी व्यक्ति की स्वतन्त्रता पर आंशिक अवरोध है। प्रत्येक व्यक्ति का शरीर पवित्र एवं मुक्त है। अतः विधि उन व्यक्तियों को दण्डित करती है जो इस स्वतन्त्रता पर अतिक्रमण करते हैं।

यह अपराध तब गठित होता है जब किसी व्यक्ति के संचालन को किसी दूसरे व्यक्ति के कार्य द्वारा स्वेच्छया निलम्बित कर दिया जाता है। दूसरे शब्दों में – किया गया कार्य अवरोध उत्पन्न करने के आशय या ज्ञान या विश्वास से किया गया होना चाहिए।

उदाहरण

(1) A ने B से उसका मकान किराये पर लिया। A मकान में ताला बन्द कर बाहर चला गया। A की अनुपस्थिति में B उस मकान में अपना ताला बन्द कर देता है (लल्लू प्रसाद Vs केदार नाथ, 1962)।

(2) A अपने मकान की छत पर था, B सीढ़ी हटा देता है जिससे A छत पर ही रहने को बाध्य हो जाता है।

Scanned with CamScanner

सदोष परिरोध – (धारा 340)

" जो कोई किसी व्यक्ति का इस प्रकार सदोष अवरोध करता है कि उस व्यक्ति को निश्चित परिसीमा से परे जाने से निवारित कर दे, वह उस व्यक्ति का 'सदोष परिरोध' करता है, यह कहा जाता है।"

उदाहरण –(1) B को दीवार से घिरे हुए स्थान में प्रवेश करा कर A उसमें ताला लगा देता है। इस प्रकार B दीवार की परिसीमा से परे किसी भी दिशा में नहीं जा सकता। A ने B का सदोष परिरोध किया है।

(2) A एक भवन के बाहर जाने के द्वारों पर बन्दूकधारी व्यक्तियों को बैठा देता है और उससे कह देता है कि यदि B भवन से बाहर जाने का प्रयास करेगा, तो वे B को गोली मार देंगे। A ने B का सदोष परिरोध किया है।

आवश्यक तत्व – सदोष परिरोध के दो आवश्यक तत्व हैं –

1. किसी व्यक्ति को सदोष रूप से अवरुद्ध करना एवं
2. ऐसा अवरोध उसको किसी निश्चित परिसीमा में बन्द करके किसी भी दिशा में जाने से रोकना।

सदोष अवरोध और सदोष परिरोध में अन्तर

(1) सदोष अवरोध किसी व्यक्ति की व्यक्तिगत स्वतन्त्रता का आंशिक अवरोध है जबकि सदोष परिरोध में स्वतन्त्रता पूर्णतया प्रतिबन्धित हो जाती है।

(2) सदोष अवरोध में सदोष परिरोध निहित नहीं है जबकि सदोष परिरोध में सदोष अवरोध निहित है।

3 सदोष परिरोध में एक निश्चित परिसीमा सदैव आवश्यक होती है जबकि सदोष अवरोध के अन्तर्गत ऐसी किसी सीमा की आवश्यकता नहीं होती।

Scanned with CamScanner

(7) उपहति एवं घोर उपहति

(धारा 319-320)

उपहति - (धारा 319)

"जो कोई किसी व्यक्ति को शारीरिक पीड़ा, रोग या अंग-शैथिल्य कारित करता है, वह उपहति करता है, यह कहा जाता है।"

इस प्रकार सामान्य रूप से उपहति के उपहति के अन्तर्गत वे समस्त कार्य आते हैं, जिनमें किसी प्रकार का शारीरिक कष्ट, बीमारी, या दुर्बलता पैदा होती है। अतएव उपहति कार्य का अर्थ है - किसी प्रकार को पीड़ा पहुँचाना।

उदाहरण - किसी स्त्री को उसके बाल पकड़ कर खींचना इस धारा के अन्तर्गत अपराध है।

पीड़ा शारीरिक होनी चाहिए, मानसिक नहीं और फिर उपहति कार्य का प्रत्यक्ष परिणाम होना चाहिए।

धारा 320 में 'घोर उपहति' का उपबंध किया गया है। अतः धारा 320 में वर्णित उपहति को छोड़कर अन्य सभी प्रकार की उपहति 'साधारण उपहति' होती है।

* यहां यह उल्लेखनीय है कि कोई भी कृत्य अपराध की श्रेणी में तभी आता है जब वह स्वेच्छापूर्वक किया गया हो, दुर्घटनावश नहीं, जैसे कि धारा 321 में व्यवस्था की गई है।

घोर उपहति - (धारा-321)

उपहति को केवल नीचे लिखी किस्में "घोर" कहलाती है -

1. पुंसत्व हरण
2. दोनों में से किसी नेत्र की ज्योति का स्थायी विच्छेद
3. दोनों में से किसी भी कान की श्रवण शक्ति का स्थायी विच्छेद
4. किसी भी अंग या जोड़ का विच्छेद

Scanned with CamScanner

5. किसी भी अंग या जोड की शक्तियों का नाश या स्थायी ह्रास।
6. सिर या चेहरे का स्थायी विद्रूपीकरण
7. अस्थि या दांत का भंग या विसंधान
8. कोई उपहति, जो जीवन को संकटापन्न करती है या जिसके कारण उपहत व्यक्ति बीस दिन तक तीव्र शारीरिक पीड़ा में रहता है या अपने मामूली कामकाज को करने के लिये असमर्थ रहता है।

घोर उपहति से सम्बंधित मामले:

1. इन्दू का मामला (1881, इलाहाबाद)
2. ओ बरीन का मामला (1880, इलाहाबाद)
3. सहर ओ रे का मामला (1878, कलकत्ता)

Scanned with CamScanner